International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 983-985

21 वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में व्यक्त नारी जीवन

सुरेंद्र कुमार[1], डॉ. जया लक्ष्मी पाटिल[2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, उच्च शिक्षा शोध संस्थान, धारवाड, कर्नाटक, भारत।
[2] प्रोफेसर, हिंदी विभाग, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, उच्च शिक्षा शोध संस्थान, धारवाड, कर्नाटक, भारत।

प्रस्तावना

हिन्दी उपन्यास सामाजिक सरोकार को अपने में लिए हुए हैं समाज की भावनाओं को समझकर ही कोई उपन्यासकार उपन्यास की रचना करता हैं। इक्कसवीं सदी का उपन्यासकार उपन्यास के केन्द्रिय पात्रों को आम आदमी से जोड़कर मंच पर प्रस्तुत करता है। इससे उपन्यास के मूलभाव को जन–मानस तक स्पष्ट किया जा सकता है। उपन्यासों का प्रदर्शन भी वर्तमान समय में बढ़ता जा रहा है। भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, बेरोजगारी, अपहरण, लूटपाट, जात–पात और समसामयिक मुद्दे के बारे में उपन्यासों के माध्यम से जन–समाज को जागरूक करते हैं। इक्कसवीं सदी के पहले दषक के समाप्त होने और एक साल और गुजर जाने पर जहां नई पीढ़ी के उपन्यास सृजकों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है, वहां पुरानी पीढ़ी के उपन्यास–सृजकों ने अपनी उपस्थिति बरकरार रखी है। भारतीय समाज में नारी और पुरूष दोनों का महत्वपूर्ण स्थान है। इन दोनों को गाड़ी के दो पहियों के समान माना गया है। यानि की एक दूजे के बिना दोनो अधूरे हैं। ''हमारी संस्कृति में 'मातृ देवो भव', 'पितृ देवो भव', 'आचार्य देवो भव', के अनुसार माता का स्थान पिता और गुरू के स्थान से पहले निश्चित किया गया हैं।''[1] इसके अलावा 'यत्र नारी पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' 14 एवं 'एक नहीं दो–दो मात्राएं नर से बढ़कर नारी' जैसी उक्तियां नारी की महता को सिद्ध करने के लिए काफी है। नारी की महानता का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रंथों में मां, पत्नी, सखी, बहन आदि के रूप में आदर के साथ वर्णित है। इनकी उदारता, महानता व कर्तव्यनिष्ठा की गौरवागाथा प्राचीनकाल से ही गाई जाती रही है।

भारतीय समाज सदैव से ही पुरूष प्रधान रहा है। समाज में स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व का हमारी संस्कृतिक मान्यताएं, रूढ़िया परंपराएं और रीति–रिवाज विरोध करते है। इसलिए सदैव से ही स्त्रियों को पुरूषों द्वारा दबाया जाता रहा है। आजादी के बाद नारी को पुरूषों के बंधन से मुक्त करने के लिए अनेक कानूनी अधिकार दिए गए परंतु महिलाओं में शिक्षा की कमी के कारण वे अपने इन अधिकारों के बारे में जागरूक ही नहीं हैं। उनको प्रयोग करने की तो दूर की बात रही। शहरों की महिलाओं में कुछ जागरूकता है पर गांवों में आज भी महिलाएं अशिक्षित हैं तथा विभिन्न प्रकार के शोषणों की शिकार है, ''ग्रामीण नारी को स्वतंत्र अस्तित्व, सम्मान न होने से उसका शोषण परिवार और समाज में निरंतर हो रहा है। परिवार में पति, सास–ससुर, देवर–देवरानी, ननद, सौतन आदि के और विधवा असहाय तथा परित्यक्ता नारियां पर परिवार तथा गांव वालों द्वारा अत्याचार किए जाते है।''[2] गांवों में होने वाले स्त्रियों पर अत्याचार में आज तक कोई कमी नहीं आयी है। 21वीं सदी के विवेच्य उपन्यास भी स्त्रियों के शोषण से मुक्त नहीं रहे है। विभिन्न अंचलों में आज भी स्त्रियों का शोषण विभिन्न तरीकों से हो रहा है। बाल विवाह, बेमेल विवाह, दहेज प्रथ, सास–ससुर, जेठ–देवर, ननद तथा गांव के जमींदार एवं दबंगों द्वारा आज भी स्त्रियों का शोषण हो रहा है। परंपराएं, रीति–रिवाज धार्मिक अनुष्ठान आदि उनके गले की फांस बने हुए है।

'आछरी–माछरी की आछरी, 'अगनपाखी' की भुवन, 'बाबल तेरा देश में की शकीला शगुफता, पारो, जैनव, मैना और मुमताज, हेमंतिया उर्फ कलेक्टरनी बाई में बुंदेलखंड की बेडनी जाति से संबंधित स्त्रियां, 'शेफाली के फूल' की अगहनिया, सावित्री झमकोइया एवं 'रंग मोर चुनरिया' की रसवन्ती तथा वन्दिनी जैसी स्त्रियों के लिए गांव, परिवार के आदमखोर भेडियों जैसे पुरूषों से अपने आप को बचाए रखना मुश्किल हो गया। वे इनकी ताक में कहीं न कहीं घात लगाए बैठे रहते हैं। जब रक्षक ही भक्षक हो तो वे किससे अपनी सुरक्षा की गुहार करें। आज हम 21वीं सदी में प्रवेश कर गए है। सभ्यता का चोला ओढ़े घूमते–फिरते रहते हैं परंतु अंदर आज भी दूषित मानसिकता विद्यमान है। आज भी स्त्रियों का शोषण जारी है। उनकी शिक्षा के नाम पर केवल दिखावा है। आज भी उनको पराया धन समझा जाता है। पुरूष वर्ग औरतों पर जुल्म करना अपना जन्मसिद्ध आधिकार मानता है। अकेले घर से निकालना उनके लिए मुश्किल है। धर्म ग्रंथ परंपराएं रीति–रिवाज तो उनके पैरों की जंजीर बने हुए है। 'बाबल तेरा देश में' धर्म ग्रंथ परंपराएं रीति रिवाज तो उनके पैरों में बंधी बेड़ियों के समान है। 'बाबल तेरा देश में' मुसलमान औरतें अपने धर्म ग्रंथ के कारण ही दुःख झेलने को मजबूर है। धरम–करम रीति–रिवाज लोगों पर इस कदर हावी है, इसका प्रमाण हमें धन सिंह के इस कथन से मिलता है, ''इतनो आसान ना है रामचंदर अरे, तोहे तो सब मालूम है कि रीति–रिवाज, धर्म–कर्म, बिरादरी और कौम भी कोई चीज होबे है। बात जब तक धर में है चाहे जैसे मन करे सुलझा लोगे पर देहली पार करते ही आदमी का बस सू बाहर हो जावे है। मैंने तो बहुत कोशिश करी है पर हदीस और सरीयत के आगे एक ना चली।''[3] इस उपन्यास में स्त्रियों के शोषण का असली कारण नसीब खान स्वीकार करता है, ''एक बात और बता दूं के हमारा जितना भी धर्मग्रंथ है, उनको सहारा लेकर सबसे ज्यादा जुल्म भी या औरत जात पे ही हुआ है।''[4]

कुछ जागरूक स्त्रियां को लगता है कि उनकी प्रताड़ना का कारण उनका अशिक्षित होना है यदि वे अपने प्रयास से गांव की अन्य लड़कियों को शिक्षित करने का प्रयास करती है तो उन्हें अपने ही धर के पुरूषों के कोपभाजन का शिकार बनना पड़ता है। 'बाबल तेरा देश में' नामक उपन्यास की शकीला एवं शेफाली के फूल' की सावित्री अपने–अपने गांव की लड़कियों, स्त्रियों को शिक्षित करने का प्रयास करती है परंतु इनके इस कार्य में पुरूषों द्वारा हरसंभव विध्न डालने की कोशिश की जाती है। सवित्री द्वारा गांवों की

स्त्रियों को शिक्षित करने के लिए अपने घर में स्कूल खोलने का प्रस्ताव रखने पर उसका पिता ठाकुर बजरंगी सिंह उसे इस तरह जवाब देता हैं, ''एक बात समझ लो, सावित्री स्कूल–फिस्कूल यहां कुछ नहीं खुलेगा, समझी तुम तो मेरे घर को अभी से अनाथ कर दे रही हो सो भी उनके लिए जिन्हें मैं दो कौड़ी के लिए भी महंगा मानता हूं!''[5] परंतु साविृत्री जानती है कि महिलाओं की दुर्दशा का कारण पुरूष समाज द्वारा उनकी अनदेखी है। सावित्री कहती है,''हमारे गांव अभी अट्ठाहरवीं शताब्दी में ही सांस ले रहे हैं क्योंकि पुरूष जानता है कि यदि महिलाओं को पूर्ण स्वाधीनता समानता, समस्तर प्रदान कर दिया गया है तो उनकी दादागिरी कौन सहेगा''[6]

21वीं सदी के उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से स्त्रियों को शोषण का बखूबी चित्रण किया है। विवेच्य उपन्यासों में अनेक स्त्रियां अपने शोषण के विरूद्ध लड़ती नजर आ रही है। 'आछरी–माछरी की आछरी एवं 'बाबल तेरा देश में' की शकीला एवं 'हेमंतिया उर्फ कलेक्टरनी बाई' की हेमंती ऐसी ही स्त्रियां है। जहां आछरी एवं शकीला गांव की प्रधान बनती है वहीं हेमंती जिले की डी एम। परंतु ये सभी अपनी जड़ों को नहीं भूलती एवं अपने पद को अपनी जाति, समाज व स्त्रियों के उत्थान में ही लगाती है। यद्यपि इन कार्यों के करने में उन्हें अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है पर वे इन सभी चुनौतियों का सामना डट कर करती है। संपूर्ण स्त्रियों की पीड़ा की गाथा आछरी के इन शब्दों में व्यक्त है, ''वैसे भी दुनिया के दस्तूर हैं बेटे वे मुझ जैसी औरत को ही नहीं दुनिया की हर औरत जात को दिन के उजाले की अपेक्षा रात के अंधेरे में देखने पसंद करते हैं। ताकि हर औरत का रास्ता एक अंधेरी गुफा की तरफ ही चलता चला जाए।''[7]

औरत के शारिरिक शोषण की कहानी भी विवेच्य उपन्यासों में प्रमुखता से व्यक्त की गई है। 'आछरी–माछरी में जहां आछरी, तुलसापंत के हवस का शिकार होकर अपने परिवार द्वारा त्याग दी जाती है। वही पर 'बाबल तेरा देश में' में घर की बहुएं अपने ससुर की हवस का शिकार बनती है। 'रंग गई मोर चुनरिया' में रसवंती के पति की मौत के बाद उसका जेठ एवं देवर उसे अपनी हवस का शिकार बनाते है जिससे उसका पूरा भविष्य ही अंधेरे में डूब जाता है। लगभग सभी उपन्यासों की स्त्रियां कहीं न कहीं इसी तरह का शोषण झेलने का मजबूर हैं ' अगन पाखी' नामक उपन्यास में 'भुवन' को उसके जीजा के द्वारा अपने बेटे की नौकरी के बदले में उसकी शादी अर्द्ध विक्षिप्त विजय सिंह से करा दी जाती है, जिससे उसकी संपूर्ण जिंदगी ही संघर्ष में गुजर जाती है और आजीवन वह इस मुसीबत से बाहर नहीं आ पाती।

संपूर्ण भारत भूमि एक जैसी नहीं है। यहां के भिन्न–भिन्न क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं से ग्रसित है और विकास की धारा से अभी भी कोसों दूर हैं। वहां का जीवन शेष भारत के जीवन से विशिष्ट है। वहां की रीति–नीति बिल्कुल अलग है। इन्हीं विशिष्ट अंचलों को केंद्र में रखकर अनेक उपन्यास लिखे गए जिससे वहां की समस्याएं एवं विशिष्टताएं आम जनता के सामने आई हैं। विवेच्य उपन्यासों में हरि सुमन विष्ट ने जहां 'आछरी–माछरी उपन्यास के माध्यम से भोटिया–महाल में रहने वाले खानाबदोश जनजाति की एक लड़की की कथा को आधार बनाकर हिमालय के पहाड़ों तथा बुग्यालों में रहने वाले भाटिया जनजाति की कथा को व्यक्त किया है। रणेंद्र ने 'ग्लोबल गांव के देवता' के माध्यम से झारखंड के असुर जनजाति के संकट ग्रस्त जीवन को व्यक्त किया है।

टविकसित क्षेत्रों को विकसित बनाने के धोखे में विकास के अग्रदूतों ने जिस तरह से आदिवासियों के जंगल, जमीन व उनकी पांरपरिक रोटी–रोजी को छीना हैं, इसका उदाहरण 'ग्लोबल गांव का देवता' में देखा जा सकता है। ग्लोबल देवताओं के मिलीभगत से आज आदिवासी अपने अस्तित्व की रक्षा करने में असमर्थ है ''जंगल बनवासियों की जन्मभूमि ही नहीं कर्मभूमि भी है। वन, बनवासियों की रोजी–रोटी ही नहीं बल्कि संस्कृति और मर्यादा भी है जो बिकाउ नहीं होती। हमारी व्यवस्था आदिवासियों की रोजी–रोटी, जमीन जीविका , पुश्तैनी घर, देवालय, श्मशान, नदी झरने व तालाब और यहां तक की उनके सम्मापूर्वक जीने का हक तक छिनती रही है। बहुत शुरू से।''[8] झारखंड में विकास का पहिया जिस गति से आगे बढ़ा हुआ आदिवासियों का पतन भी उसी गति से हुआ है चाहे टाटा स्टील कंपनी नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज, कोयल, कार्रो डैम, बोकारों इस्पात कारखाना आदि की स्थापना आदिवासियों को कुचल कर ही किया गया है, ''भूमंडलीयकृत होते भारत में अजगर की भांति पसरे पूंजीवाद से आदिवासियों की कीमत पर बाजार के विकास की परंपरा मजबूत होती जा रही है।''[9] इन्हीं सब विसंगतियों को विषय वस्तु बनाकर रणेंद्र ने 'ग्लोबल गांव के देवता' रचना किया है, ''मूलरूप से यह उपन्यास भौरांपाट नामक पठारी इलाके में बसे असुर जाति के आदिवासियों के भयावह शोषण और उससे उपजी कुंठा एवं निराशा का सार भर नहीं बल्कि इस समाज में आ रही शिक्षा की नई हवा और उसके फलस्वरूप उपजी संघर्षशील अस्तित्ववादी चेतना का संपूर्ण दास्तान है।''[10]

लेखक ने असुर जनजाति में फैली बेरोजगारी, सेरेब्रल मलेरिया का प्रकोप समाज में फैले अंधविश्वासों के साथ–साथ लोगों में फैले मुडीकटवा के आतंक को बड़े ही रोचक ढ़ंग से व्यक्त किया है। इन सबसे बड़ा आतंक तो बास्साइट की कानूनी–गैर कानूनी कंपनियों एवं आस–पास के बड़े जोतदार है जो गरीबों की जमीनों पर निगाह लगाए बैठे हैं तथा इनको हड़पने के लिए तरह–तरह के हथकंडे भी अपना रहे है। इस दोहरे मार के अलावा इनके बहू–बेटियों की इज्जत आबरू भी सुरक्षित नहीं है कंपनियों के मालिक मुंशी अमला के द्वारा इनकी लड़कियों का बुरे तरीके से यौन शोषण भी किया जाता है। ग्लोबल गांव के देवताओं के रूप में आने वाले आकाशचारी शिंडाल्को टाटा और बेदाग कंपनियों के किशन कन्हैया पांडे उर्फ पांडे बाबा, मुडीकटवा, बुद्धराम सिंह खरेवार, गोनू सिंह राजपूत, शिवदास बाबा जैसे चरित्र की मार से पूरा असुर समुदाय पीड़ित है। रणेंद्र ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया में आदिवासी क्षेत्र के खनिजों, प्राकृतिक स्रोतोंका दोहन करने वालों की मनोदशा पर स्टीक टिप्पणी किया है, 'सामान्य तौर पर इन आकाश चारी देवताओं को जब अपने आकाशमार्ग से या सेटेलाइट की आंखों से छत्तीसगढ़ उड़ीसा, मध्यप्रदेश, झारखंड आदि राज्यों की खनिज संपदा जंगल व अन्य संसाधन दिखते है तो उन्हें लगता है कि अरे इन पर तो हमारा हक है। इन खनिजों पर , जंगलों में घूमते हुए लंगोट पहने असुर, बिरजिया, उराव मुंडा आदिवासी दलित, सदान दिखते है तो उन्हें बहुत कोफ्त होती है वे इन कीड़ों मकौड़ों से जल्द निजात पाना चाहते हैं तब इन इलाकों में झाडू लगाने का काम शुरू होता है।''[11] गरीबी के कारण इन जातियों का शारीरिक मानसिक और आर्थिक शोषण इन ग्लोबल गांव के देवताओं द्वारा होता रहता है। रणेंद्र ने असुर जाति के इस शोषण की कथा को सवालों के माध्यम से उठाया है

निष्कर्षः

21वीं सदी के उपन्यासों में नारी शोषण के साथ–साथ उनके संघर्षों को उजागर किया गया है। आज की नारी, पुरूषों के अन्याय व अत्याचार को चुपचाप सहन नहीं करती वह तो उनका कड़ा प्रतिरोध करती है। यद्यपि ग्रामीण औरतों में अभी भी शिक्षा की कमी

है पर पढ़ी–लिखी स्त्रियां उन्हें शिक्षित करने के लिए आगे आ रही है। स्त्रियां आज न केवल गांवों की मुखिया बल्कि उच्च अधिकारी भी बन रही है। जिससे उनमें नेतृत्व क्षमता भी बढ़ती है और वे अन्य स्त्रियों को भी इसके लिए प्रेरित करती हैं।

संदर्भ

1. डॉ शिवाजी नाले, रामदश मिश्र के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन, पृष्ठ–59
2. डॉ शिवाजी नाले, रामदश मिश्र के कथा साहित्य में ग्रामीण जीवन, पृष्ठ–68
3. भगवान दास मोरवालः बाबल तेरा देश में, पृष्ठ–441
4. भगवान दास मोरवालः बाबल तेरा देश में, पृष्ठ–492
5. विद्यावती दुबेः शैफाली के फूल, पृष्ठ–69
6. विद्यावती दुबेः शैफाली के फूल, पृष्ठ–146
7. हरिसुमन विष्टः आछरी–माछरी,पृष्ठ–104
8. बहुवचन तिमाही, संयुक्तांक अप्रैल–जून, जुलाई–सितंबर 2012 पृष्ठ–8
9. बहुवचन तिमाही, संयुक्तांक अप्रैल–जून, जुलाई–सितंबर 2012 पृष्ठ–9
10. कथादेश मासिक जुलाई 2012,पृष्ठ–91
11. रणेन्द्रः ग्लोबल गांव के देवता,पृष्ठ–93